

नर हो न निराश करो मन को

Nar ho na Nirash karo Mann ko

प्रस्तावना : हिन्दुओं के धार्मिक सिद्धान्तों के अनुसार 84 लाख योनियों में मानव की योनि सर्वश्रेष्ठ है जो कि बार-बार नहीं प्राप्त होती और अच्छे कर्मों के आधार पर कभी एक बार बड़ी कठिनता से प्राप्त होती है। कबीर के मतानुसार-

“मनिखा जनम दुर्लभ है, देह न बारम्बार।

तरुवर से फल गिरि पड़ा, बहुरि न लागै डार।”

चार्वाक, ईसाई तथा इस्लामी दर्शन के अनुसार प्राणी केवल एक बार ही जन्म ग्रहण करता है। अतः मानव जीवन की बहुत बड़ी महत्ता स्वयमेव सिद्ध है। भले ही भावुक वेदान्ती कुछ भी कहें, आत्मा को अजर-अमर बतलाएँ ; किन्तु कबीर के मतानुसार मानव जीवन पानी के बुलबुले के अतिरिक्त और कुछ नहीं है-

पानी केरा बुलबुला, अस मानव की जात।

देखत ही छुप जायेगा, ज्यों तारा परभात।।”

प्रकृति ने मनुष्य को विश्वकर्मा के रूप में प्रतिष्ठित किया है। मानव जब से इस सृष्टि में साँस लेने लगा, उसने जमकर संघर्षों का सामना किया और प्रकृति को अनुवर्ती बनाने के लिए श्रम किया। युग-युग का इतिहास साक्षी है कि समय के पाँव तो डगमगाये ; लेकिन मनुष्य का हाथ नहीं काँपा। आज के ये बड़े-बड़े नगर, भव्य भवन, कल-कारखाने, राजमार्ग, रेल, मोटर और वायुयान आदि सभी कुछ मानव ही का तो श्रम सिंचन हैं। युग की भौतिकता और वैज्ञानिकता के साथसाथ लोगों की श्रम सम्बन्धी धारणा बदल भले ही गई हो; किन्तु श्रम का महत्त्व इस यांत्रिक युग में भी कम नहीं हुआ; अपितु उसमें कुछ वृद्धि ही हुई है। आज भी सोफोकल्स के मतानुसार, “उन्नति का द्वार केवल श्रम की चाबी ही खोल सकती है।”

श्रम के बिना सभी महत्त्वाकांक्षाएँ पर कटे पक्षियों के समान तथा सभी मनोरथ पंगु हैं। बलवान से बलवान व्यक्ति भी बिना परिश्रम के कुछ भी नहीं प्राप्त कर सकता है। महान् शक्तिशाली सिंह भी संस्कृत मनीषी के मतानुसार बिना परिश्रम के भोजन नहीं प्राप्त कर पाता है-

“उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।

नहि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः।”

परिश्रम, पुरुषार्थ, उद्यम, उद्योग और श्रम या मेहनत के माध्यम से ही मानव अपना लक्ष्य साधन करने में समर्थ होता है।

श्रम की परिभाषा : किसी भी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किये गए प्रयत्नों का नाम ही श्रम है। आज श्रम की परिभाषा में अत्यन्त भौतिकता आ गई है। मार्शल के मतानुसार, “श्रम मनुष्य का वह शारीरिक या मानसिक कार्य है जो थोड़े बहुत अंशों में इस यत्न में से प्राप्त आनन्द के अतिरिक्त अन्य लाभ के लिए किया जाता है।” दूसरे शब्दों में, वह शारीरिक प्रयास जिसके द्वारा मानव किसी कार्य को पूरा करना चाहता है, श्रम कहलाता है। अर्थशास्त्र की दृष्टि में किसी की निगरानी में, वस्तु या अर्थ की अपेक्षा में किया गया शारीरिक या मानसिक प्रयत्न या कार्य, श्रम कहलाता है। आज के भौतिक विश्व में विख्यात अर्थशास्त्र उत्पादन के सभी साधनों में श्रम को विशिष्ट स्थान देता है। उसकी दृष्टि में श्रम के विशिष्ट लक्षण इस प्रकार हैं-

(1) श्रम श्रमिक से भिन्न नहीं है। श्रमिक जहाँ भी जायेगा, श्रम को अपने अन्दर भर कर जायेगा।

(2) श्रम नाशवान है। वह समय के साथ नष्ट हो जाता है और भर्तृहरि के शब्दों में, “कालो न यातः वयमेव यातः” (काल नहीं अपितु हम ही क्षीण होते हैं) इस कथन को सार्थक सिद्ध करता है। गया समय फिर हाथ नहीं आता। अतः प्रत्येक करणीय कार्य को यथासमय पूर्ण कर लेना चाहिए।

(3) श्रम की पूर्ति लचकदार नहीं है। माँग के साथ। अन्य चीजों का उत्पादन भले ही बढ़ सके, श्रम उतनी तेजी से नहीं बढ़ाया जा सकता है।

(4) श्रम की गतिशीलता-स्थान गतिशीलता और व्यवसाय गतिशीलता दोनों प्रकार की अत्यन्त कम हैं।

श्रम का वर्गीकरण : अर्थशास्त्री श्रम के दो भेद करते हैं-उत्पादक और अनुत्पादक। फ्रांस के निसर्ग पन्थी अर्थशास्त्री खेती के कार्य में प्रयुक्त श्रम को ही उत्पादन श्रम कहते हैं। व्यापार और वाणिज्य केवल वस्तुओं का स्थानान्तरण ही करते हैं या उसका स्वरूप बदलते हैं। नवीन चीजों का उत्पादन नहीं होता। इसी से यह श्रम अनुत्पादक श्रम की कोटि में गिना जाता है। अर्थशास्त्र के पिता आदम स्मिथ अर्थशास्त्र को भौतिक कल्याण से सम्बन्धित शास्त्र मानते थे। इसी कारण से यह डाक्टर और शिक्षक आदि के श्रम को भी अनुत्पादक श्रम मानते थे। किन्तु आज यह परिभाषा ठीक नहीं मानी जाती। आज तो किसी भी प्रकार का श्रम, सम्पत्ति के उत्पादन में सहायक है या सम्पत्ति पैदा कर सके। या सेवा करे वह उत्पादक ही है। इस प्रकार अर्थ भी श्रम को भौतिक जीवन की अमूल्य आवश्यकता मानता है।

श्रम का महत्त्व देखने के लिए हम इसे दो विभागों में विभाजित करेंगे। एक है शारीरिक श्रम और दूसरा मानसिक श्रम जो कि बौद्धिक श्रम से लेकर आध्यात्मिक महत्त्व तक पहुँचाता है। शारीरिक श्रम से शरीर के स्नायुओं को पोषण प्राप्त होता है। हेतु की दृष्टि से शारीरिक श्रम के दो भेद किए जा सकते हैं (1) श्रम या मजदूरी (2) व्यायाम।

श्रम या मजदूरी शरीर को यन्त्रवतं बना देती है। इससे जो उत्पादन होता है, वह मानसिक आनन्द प्रदान करता है। श्रम करने की पर्याप्त शक्ति होने पर भी जब मानव को इसके लिए अवसर नहीं प्राप्त होता है, तो चिन्ता, व्यग्रता और उद्विग्नता के कीट उसके जीवन रूपी वृक्ष को कुतर-कुतर कर खोखला बनाना प्रारम्भ कर देते हैं। ऐसे अवसर पर हमें रूस के संविधान के वह स्वर्णाक्षर याद आते हैं कि कार्य (श्रम) हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है। ऐसे ही अवसर पर हमें कार्यालय के कार्य ही पूजा शब्द जीवन के सत्य के निचोड़ जैसे प्राप्त होते हैं। उनको पूँज हमारे मुख से यही कहलाती है कि व्यक्ति से काम करने का अधिकार छीन लेना उसका जीवन छीन लेने के बराबर है।

जहाँ श्रम शरीर के गिने-चुने स्नायुओं के संचालन तक ही सीमित है, व्यायाम में प्रत्येक स्नायु के पोषण का उद्देश्य है। व्यायाम भी सीमित होना चाहिए। सीमातीत व्यायाम शरीर

को क्षीण करने वाला श्रम बन जाता है। वैसे स्वाभाविक श्रम साकेत में वर्णित पंचवटी की सीता कितना अच्छा लगता है-

‘अपने पौधों में जब भाभी भर-भर पानी देती हैं,
खुरपी लेकर आप निराती जब वे अपनी खेती हैं।
पाती हैं तब कितना गौरव, कितना सुख, कितना सन्तोष,
स्वावलम्बन की एक झलक पर न्यौछावर कुबेर का कोष।”

मानसिक श्रम आज बौद्धिक श्रम का पर्याय सा बन गया है। अध्ययन व लेखन इसी के अन्तर्गत आता है, जो श्रम बुद्धि श्रम कहलाता है। जैसे पुस्तकालय उपभोक्ता, वकील, प्रोफेसर और डाक्टर आदि के कार्य।

श्रम का महत्त्व : मानव जीवन में श्रम की महत्ता अद्वितीय है। यही वह शक्ति है जो दुर्बल को सबल और रंक को राजा बना सकती है। परिश्रम के बिना छोटे से छोटा कार्य साध्य नहीं है। परिश्रमी अनवरत कार्य करते हुए बड़े-बड़े लम्बे मार्ग तय कर लेते हैं। कछवे और खरगोश की दौड़ इसका प्रतीक है, जिसमें कछुआ अनवरत चलते हुए विश्राम करने वाले खरगोश से पहले गन्तव्य स्थान पर पहुँच गया था।

यही नहीं अपने परिश्रम के बल पर अनवरत अभ्यास से सुस्त तथा पिछड़े छात्र कभी-कभी मेधावी सुस्त छात्रों से बाजी मार ले जाते हैं। इसी की ओर हिन्दी कवि का कथन संकेत करता है-

“करत करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान।

रसरी आवत जात ते, सिल पर परत निशान।।”

परिश्रमी व्यक्ति को सरकारी, व्यक्तिगत, आर्थिक और सामाजिक आदि सभी क्षेत्रों में आदर प्राप्त होता है। वह दूसरों के लिए आदर्श बन जाता है।

श्रम से लाभ : मानव जीवन में श्रम सुख का प्रदाता है। जो परिश्रम करते हैं, वे सबल होते हैं और उनकी सहायता ईश्वर भी करते हैं; क्योंकि ईश्वर उनकी सहायता करते हैं जो

परिश्रमी होते हैं। ऐसे परिश्रमी लोग बड़े ही हृष्ट-पुष्ट एवं वीर होते हैं और वे ही इस पृथ्वी पर समस्त भोग प्राप्त करते हैं; क्योंकि 'वीर भोग्या वसुन्धरा' है। इस प्रकार परिश्रम से मानव को अपनी सम्पूर्ण शक्ति का ज्ञान प्राप्त होता है। जो व्यक्ति परिश्रम करते हैं, वे जीवन की सभी उपयोगी वस्तुएँ प्राप्त करते हैं। अतः उनको किसी चीज का अभाव नहीं होता है। इसलिए वे चिन्तामुक्त हो जाते हैं। परिश्रमी व्यक्ति समाज में सम्मानपाते हैं तथा उनके देश की विदेशों तक में ख्याति होती है। भगवान श्रीकृष्ण के मतानुसार कर्तव्य पथ पर चलकर श्रम करने वाला-

“हतो वा प्राप्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् ।”

इस प्रकार श्रम न केवल भौतिक व सांसारिक उन्नति के द्वार खोलता है; अपितु मानव को आध्यात्मिक उन्नति की ओर ले जाने में भी सहायक होता है। अतः श्रम जीवन के सर्वांगीण विकास की चाबी है।

श्रम व विश्राम : श्रम की उपादेयता को कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता है। श्रम दिन के प्रकाश के समान है जिसका आनन्द रात्रि के अँधेरे के बाद प्राप्त होता है। अति सर्वत्र वर्ज्येत के सिद्धान्त के अनुसार परिश्रम की भी एक सीमा है। निरन्तर श्रम करते रहने से मानसिक कुशलता तथा कार्यक्षमता का हास होता है। अतः श्रम के साथ विश्राम की भी आवश्यकता है इसीलिए विख्यात निबन्धकार 'आर० एल० स्टीवेन्सन' तथा 'बरोँडरसल' ने विश्राम की महत्ता का वर्णन किया है। बिना श्रम किए 'आराम हराम है'; क्योंकि विश्राम तो श्रम रूपी रूपसी का सुहाग है। अतः जो विश्राम के वास्तविक सुख का अनुभव करना चाहते हैं, उन्हें श्रम करना ही चाहिए। श्रीमती श्रेल के अनुसार, "परिश्रम के लिए श्रम तथा विश्राम वाले व्यक्ति के लिए परिश्रम का सिद्धान्त अनेक शिकायतों का उपचार कर देता है।"

उपसंहार : श्रम अथवा उद्योग ही जीवन का सार है। इसके बिना। मनुष्य मृतक समान है। श्रम ही मानव की उन्नति का सोपान है। श्रम के द्वारा ही संसार में प्रत्येक व्यक्ति को प्रगति की प्राप्ति होती है। श्रमी व्यक्ति अपने जीवन के स्वयमेव भाग्य विधाता होते हैं। दैव-दैव तो केवल आलसी पुकारते हैं। जो श्रमी व्यक्ति है वह शुद्ध स्वनिर्मित नल व कूपादि का जल पीते हैं तथा 'जाके आँगन है नदी सो करत मरत पियास' कबीर के कथन को

मानकर स्वतः आलस्य त्यागकर मधुर जलपान करते हैं। भाग्यवाद विकास में बाधक है, सत्य है-

‘श्रम जीवन का सार है’ श्रम मानव का हार।

श्रम करता है गुण महा, श्रम सच्चा व्यवहार।।’